राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना

राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना

सीताराम गोयल

अनुवादक: सौरभ अग्रवाल

वॉयस ऑफ इंडिया

नई दिल्ली

© वॉयस ऑफ इंडिया
सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम हिन्दी संस्करण, 2024

ISBN 978-93-85485-39-8

Hindi translation of "The Emerging National Vision"
राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना
लेखक: सीताराम गोयल; अनुवादक: सौरभ अग्रवाल

प्रकाशक :
वॉयस ऑफ इंडिया
2/18, अन्सारी रोड,
नई दिल्ली - 110 002

Website: www.voiceofin.com

Published by Voice of India, 2/18, Ansari Road, New Delhi – 110 002.
Printed at D.K. Fine Arts Press Pvt. Ltd., Delhi – 110 052.

राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना

रविवार 4 दिसम्बर, 1983 के दिन कोलकाता[1] में योगक्षेम मासिक बैठक में श्री सीताराम गोयल द्वारा दिया गया भाषण।

डॉ. धर, श्री घोष और मित्रों[2]

श्री घोष ने मेरे विषय में जो कुछ कहा है, उससे मेरी झिझक और अधिक बढ़ गई है, जो प्रारंभ से ही थी क्योंकि मुझे सार्वजनिक मंच से व्याख्यान देने की आदत नहीं है। मैं नहीं जानता कि मैं एक अच्छा लेखक हूँ या नहीं। लेकिन मैं स्वयं के विषय में यह निश्चित रूप से जानता हूँ कि मैं एक साधारण वक्ता हूँ। अत: यदि मेरे संबोधन में एक क्षम्य सीमा तक मुझसे कोई त्रुटी हो जाती है या मैं कभी-कभी जो यकायक असंगत हो जाता हूँ, तो आप सभी से सविनय करबद्ध प्रार्थना है कि आप मुझे उक्त कृत्य के लिए कृपया क्षमा करें।

वस्तुत: यह उचित होता यदि आज यहाँ मंच पर ओजस्वी एवं प्रखर वक्ता तथा मेरे परम मित्र श्री रामस्वरूप जी होते, क्योंकि मैंने जो कुछ भी लिखा है और आज मुझे जो कुछ भी आप सभी के समक्ष प्रकट करना है,

---

[1] *अनुवादक की टिप्पणी*—पूर्व नाम कलकत्ता, भारत के पश्चिम बंगाल राज्य की राजधानी है और भारत के प्रमुख महानगरों में से एक है।

[2] डॉ. सुजीत धर और श्री अमिताव घोष।

वह वस्तुतः उन्हीं से ग्राह्य है। वह मुझे बीज-विचार देते हैं, जिन्हें मैं अपने दीर्घ अथवा ह्रस्व लेखों के माध्यम से अंकुरित-पोषित-विकसित करने का प्रयास करता हूँ। वह ही मुझे विषयों पर निष्पक्ष तथा तर्कसंगत परिप्रेक्ष्य प्रदान करते हैं। वह ही मुझे मेरे विचार की युक्तिपूर्ण रूपरेखा देते हैं। अतः आज आपके समक्ष केवल भाषा ही मेरी अपनी है। यदि भाषा भी उनकी अपनी होती तो यह अपेक्षाकृत श्रेयस्कर होता। मेरी भाषा कभी-कभी तीखी और कटु हो जाती है, जो कुछ श्रोताओं को व्याकुल कर सकती है। पर श्री रामस्वरूप जी के पास दृढ़ता के साथ-साथ विनम्रता से अपने उद्गार-विचार व्यक्त करने का अद्भुत-अलौकिक कौशल है, जो मैं कठोर अनुशासन एवं तप करने के पश्चात् भी अभी तक प्राप्त नहीं कर पाया हूँ। मेरे लिए यह नितांत हर्ष एवं प्रसन्नता का विषय होगा यदि वह इस बैठक के समाप्त होने से पूर्व हमें इस गंभीर विषय पर अपने ऋषितुल्य विचारों से अवगत कराकर जागृत करें।

मुझे लगता है कि कदाचित् सचेत बंगाल के जागरूक बन्धुओं के समक्ष, विशेषकर कोलकाता के इस प्राणवान् नगर के भद्र बन्धुओं के समक्ष, 'राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना' विषय पर अपने विचार प्रकट करना नितांत धृष्टता ही होगी। इस शताब्दी के प्रांरभिक दशकों में बंगाल की तेजस्विनी भूमि से तथा कोलकाता के विज्ञ नगर से ही हमें राष्ट्रीय दृष्टि की एक विशिष्ट तथा सुस्पष्ट समझ प्राप्त हुई थी। यह जानने और समझने के लिए कि वह राष्ट्रीय दृष्टि क्या थी, आपको केवल श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय जी, स्वामी विवेकानन्द और महर्षि अरबिंदो घोष जी की रचनाएँ पढ़नी होंगी तथा गुरुदेव रबीन्द्रनाथ टैगोर जी के गीतों का श्रवण करना होगा। इससे आपको यह समझने में भी मदत मिलेगी कि वह राष्ट्रीय दृष्टि पुनर्जीवित होकर तथा जनसमर्थन से शक्ति-संबल प्राप्त करने के पश्चात् कौन-सा

स्वर्णिम भव्यस्वरूप धारण करेगी। इन दूरदर्शी महापुरुषों ने गूढ़ रहस्यों, मानवीय तथा राष्ट्रीय चिंतन पर जो कुछ भी लिखा है या उसकी व्याख्या की है तथा अपने जीवनचरित्र के माध्यम से हमें जो कुछ भी समझाने-सिखाने का प्रयास किया है, उसमें मुझे कुछ भी जोड़ने की आवश्यकता नहीं है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं इन प्रेरणा के दिव्यपुंजों की दूरदर्शिता तथा दिव्यदृष्टि का अक्षरश: भाषांतर करने में असक्षम हूँ।

इन महापुरुषों द्वारा प्रतिपादित राष्ट्रीय दृष्टि ने नित्य ऊँचाई प्राप्त कर शिखर तक पहुँचने का कीर्तिमान रचा था तथा स्वदेशी आंदोलन के समय में उसने अपनी सर्वोच्चता-सर्वमान्यता प्राप्त की थी। इससे भयग्रस्त होकर साम्राज्यवादी ताकतों—यानी इस्लामी साम्राज्यवाद (या इस्लामी साम्राज्यवाद के अवशेष) और ब्रिटिश साम्राज्यवाद—ने मिलकर बंगाल का विभाजन किया। परंतु उस वक्त उनका ये षड्यंत्र विफल हो गया। उनके कुटिल कुचक्र की हार हुई क्योंकि राष्ट्रीय दृष्टि बहुत स्पष्ट थी, बहुत दृढ़ थी। वस्तुत: स्वदेशी आंदोलन ने ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद से स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु जन-संघर्ष प्रारम्भ करने की राष्ट्रीय दृष्टि प्रदान की थी। इससे पूर्व भारत का स्वतंत्रता आंदोलन कुछ प्रतिष्ठित लोगों द्वारा एक साथ बैठक करने और कई प्रस्तावों को पारित करने तक ही सीमित था। यह पहली बार था कि भारत ने स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में अपने अंशों-अंगभूतों की व्यापक लामबंदी देखी। स्वदेशी आंदोलन की शहनाई-गूँज, एक साथ पूरे भारत में दूर-दूर तक सुनाई दी, विशेषकर महाराष्ट्र और पंजाब में। इसके साथ ही स्वदेशी आंदोलन के दौरान दिए गए मंत्रों—स्वदेशी का मंत्र, स्वराज्य का मंत्र, वन्दे मातरम् का मंत्र—से एक जागृत राष्ट्र की समस्त आकाँक्षाएँ आज भी स्पंदित हैं। वह राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना का एक संपूर्ण चित्र था, जैसा कि होना ही था।

परंतु दुर्भाग्य से विशेषकर स्वतंत्रता संग्राम के बाद के चरणों में तथा बाद के दिनों में राष्ट्र के अकुशल नेतृत्व के हाथों में आने के फलस्वरूप वह राष्ट्रीय दृष्टि दुर्बल हो गई। उस स्पष्ट राष्ट्रीय दृष्टि पर कुछ अन्य दर्शनों ने ग्रहण लगाकर उसे अस्पष्ट धुंधला-सा कर दिया। यह विडम्बना ही कही जाएगी कि कालांतर में राष्ट्रीय दृष्टि ने अपनी समस्त स्पष्टता खो दी थी, अतः विभाजन की त्रासदी के रूप में हमें दुखद परिणाम को स्वीकार करना पड़ा। हम जानते हैं कि क्या-क्या दुखद हुआ था और हृदय-विदारक घटनाएँ कैसे और क्यों घटीं थीं। उस त्रासदी से सबसे ज्यादा हानि बंगाल को हुई है। बंगाल ने जो दुःखदायी-कष्टकारी घाव सहे हैं और जो घाव वर्तमान में नासूर बन गए हैं—मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस पर मुझे कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। आप सभी यह सब-कुछ मुझसे बेहतर जानते हैं। मैं केवल यह तथ्य इंगित करना चाहता हूँ तथा इस सुनने में अति कटु-सत्य को इंगित करना मेरा परम् कर्तव्य भी है कि बंगाल की इस बौद्धिक भूमि ने राष्ट्रीय दृष्टि की उपेक्षा के कारण हृदय-विदारक कष्ट सहा है। पर वस्तुतः बंगाल की इस वीर वसुंधरा ने इस देश के अन्य भागों की तुलना में उस समावर्ती राष्ट्रीय दृष्टि की हद से अधिक उपेक्षा की है। अतः यह शक्ति-स्वरूपा बंगाल का कर्तव्य है कि वह उस राष्ट्रीय दृष्टि को पुनर्जीवित करे, उस राष्ट्रीय दृष्टि को पुनः प्राप्त करे, उस राष्ट्रीय दृष्टि को पुनः पुष्ट करे तथा इस प्रकार वह अपने स्व-अहम् में विद्यमान भारत के सुप्त सिंह-नेतृत्व को पुनः प्राण-प्रतिष्ठित कर जागृत करे।

बंगाल आज उपेक्षा का अनुभव कर रहा है। परंतु यह दोष, शेष भारत का नहीं है। त्रुटी बंगाल से ही हुई है। बंगाल ने अपनी ही विरासत की उपेक्षा की है। बंगाल ने अपनी उस राष्ट्रव्यापी दृष्टि को नज़र-अंदाज किया है,

जिसे उसने अतीत में सम्पूर्ण भारतवर्ष के साथ साझा किया था और जिसके प्रतिफल में बंगाल को भारतवर्ष का आध्यात्मिक-धार्मिक-मनोवैज्ञानिक-राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक-सैन्य नेतृत्व करने का गौरव प्राप्त हुआ था। यह सर्वविदित है, अतः मुझे इसका विवरण देने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप जानते हैं कि आज वर्तमान में बंगाल में क्या हो रहा है। आज वर्तमान में न केवल आपकी रक्षक-वसुधा से प्रतिपादित राष्ट्रीय सुरक्षा से सम्बंधित दृष्टिकोण पर अनर्गल आक्षेप लगाए जा रहे हैं वरन् आपकी शौर्य की भूमि पर जन्में महापुरुषों के व्यक्तिगत चरित्र पर भी षड्यंत्र के तहत कालिख लगाकर प्रश्न उठाया जा रहा है। जब मैंने बंगाली प्रेस, बंगाली उपन्यासों और अन्य लेखों में चल रहे विभिन्न तर्कों-वितर्कों को पढ़ा, तो वस्तुतः मेरे मन में स्वतः ही विषाद एवं क्रोध का ज्वालामुखी धधक उठा। निस्संदेह मुझे यह जानकर अत्यधिक दुख हुआ है कि जिस माँ रणचंडी काली कलकत्ते वाली की भूमि ने कभी भारत को शिखर पर पहुँचाया था, वहाँ सोच इतने निम्न स्तर तक कैसे पहुँच सकती है?

वह राष्ट्रीय दृष्टिकोण क्या था जो इन महापुरुषों ने हमें दिया और जिसने भारत को स्वतंत्रता के लिए वृहद् संघर्ष प्रारंभ करने के लिए प्रेरित किया। उन शहीद क्रांतिकारियों को याद करें जिन्हें भारत की इस वीर वसुधा बंगाल ने उस संक्रमण काल में हर कष्ट सह कर उत्सर्जित किया था। याद कीजिए उन महान परम् तपस्वी क्रांतिकारी महिलाओं एवं पुरुषों को, जो अपने हाथ में श्रीमद्भगवद्गीता और ओष्ठों पर त्वम् हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी, कमला कमलदलविहारिणी, वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्, नमामि कमलाम्, अमलां अतुलाम्, सुजलां सुफलाम् मातरम्, वन्दे मातरम् का मधुर गान, मुख पर आह्लाद लालिमा के साथ फाँसी की रस्सी को चूमकर, स्वयं बिना झिझके फाँसी की रस्सी के फंदे को अपने गले में

डालकर, तत्पश्चात् उस बलि-वेदी पर स्वयं फाँसी पर झूलकर अपने प्राणों का उत्सर्ग हमारे सुनहले भविष्य के लिए कर गए थे। वे आज के दिनों के तथाकथित क्रांतिकारियों की तरह नहीं थे। मैं पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना के साथ कह सकता हूँ कि आज के दिनों में कई स्वघोषित तथाकथित क्रांतिकारी, सामान्य नृशंस अपराधियों से अधिक कुछ और नहीं हैं। पूर्व के क्रांतिकारी, वर्तमान के तथाकथित क्रांतिकारियों से पृथक निष्कामभाव से ओत-प्रोत उच्च चरित्र के थे क्योंकि उनकी दृष्टि निम्न-संकीर्ण तथा स्वार्थपरकता से पृथक व्यापक राष्ट्रीय सद्चरित्र की थी। वह उच्च व्यापक राष्ट्रीय दृष्टि क्या थी? एक तरह से उन्होंने कोई नई बात नहीं कही थी। उन्होंने आधुनिक भाषा में तथा आधुनिक परिवेश के अनुसार वेदों में, उपनिषदों में, जैनागम में, त्रिपिटक में, रामायण और महाभारत में, पुराणों में, साझा संस्कृति के धर्मशास्त्रों में तथा संतों और सिद्धों के उत्तरार्ध के काव्यों में निहित प्राचीन वैदिक दृष्टि का पुनर्कथन तथा पुनर्वाचन किया था। निस्संदेह हमारे सहस्राब्दियों का दीर्घकालिक इतिहास हमारी अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-संस्कृति की अविरल राष्ट्रीय दृष्टि के अनगिनत प्रवक्ताओं का साक्षी रहा है।

उस अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत दृष्टि का पहला आयाम यह था कि भारत सनातन धर्म की भूमि है। यह उस राष्ट्रीय दृष्टि का प्रथम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बिंदु था। वस्तुत: श्री अरबिंदों ने अपने उत्तरपाड़ा[3] में दिए गए भाषण में कहा था कि सनातन धर्म के उत्थान के साथ

---

[3] *अनुवादक की टिप्पणी*—उत्तरपाड़ा, पश्चिम बंगाल के हुगली ज़िला में स्थित एक नगर है। यह कोलकाता महानगर क्षेत्र का अंग है। उत्तरपाड़ा के लोगों ने 1900 सीई से 1947 सीई के मध्य भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अहम भूमिका निभाई थी। उत्तरपाड़ा के युवाओं ने 'महात्मा गांधी' की अहिंसा और 'मास्टर दा' सूर्यसेन के सशस्त्र संघर्ष के आह्वान का अनुसरण करते हुए भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में विशिष्ट योगदान दिया था।

भारत का उद्भव होगा, यदि सनातन धर्म का सूर्य अस्त होगा तो भारत का भी सूर्य अस्त होगा, तथा यदि भविष्य में कदाचित् सनातन धर्म का मरणासन्न होकर मृत्यु का आलिंगन करना संभव हुआ तो भारत की भी वही गति होगी। यह मेरे लिए सनातन धर्म के विषय में वार्ता करने का अवसर नहीं है। मैं बस इतना कहना चाहता हूँ कि सनातन धर्म एक प्राकृतिक धर्म है, यह मानव स्वभाव तथा मानवीय आकाँक्षाओं के विकास के साथ सामंजस्य रखता है। यह असहिष्णु ईसाईयत और इस्लाम की तरह कोई कृत्रिम उपासना पद्धति तथा अलगाववादी विचारधारा नहीं है। यह असहिष्णु ईसाईयत और इस्लाम की तरह किसी मनुष्य के नृशंस भौतिक मस्तिष्क द्वारा निर्मित और उसके मूढ़ अनुयायियों पर थोपी गई यांत्रिक मान्यताओं का समूह नहीं है। समावेशी सहिष्णु सनातन धर्म के सुदृढ़ अस्तित्व में ही भारत की अखंडता, विकास एवं सम्पन्नता निहित है, यह हमारी राष्ट्रीय दृष्टि का सर्वप्रथम आयाम था।

इस अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत दृष्टि का दूसरा आयाम एक विशाल और विविध संस्कृति से सम्बंधित था। हमारी जनसंख्या के विभिन्न वर्गों, हमारे समाज के विभिन्न अंगभूतों तथा हमारे सांस्कृतिक राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों ने अपने सुदृढ़ आधार और अन्योन्याश्रित समावेशी अधिकारों का प्रयोग करते हुए अपनी स्वयं की संस्कृति, कला तथा साहित्य को विकसित तथा समृद्ध किया है। हमारे पास एक विशाल साहित्य है—पवित्र, धर्मनिरपेक्ष और वैज्ञानिक—जो इस सांस्कृतिक राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों में तथा विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में विकसित हुआ है। हमारे पास विविध-वृहद्-विपुल कलाओं—वास्तुकला, मूर्तिकला और संगीत आदि के ज्ञान के भण्डार हैं। यह कला और साहित्य का एक विशाल ताना-बाना है। परंतु इसकी आत्मा सर्वथा सनातन धर्म की भावना से ओत-प्रोत है। इसमें निहित सुर तथा संपूर्ण रस, हर प्रकार से अनादिकालीन

शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत सनातन धर्म के साथ तारतम्य को प्रतिबिंबित करते हैं। अत: समावेशी सहिष्णु सनातन धर्म के सुदृढ़ अस्तित्व में ही भारत की सांस्कृतिक विविधता-वृहत्ता-विपुलता की रक्षा करने का सामर्थ्य है, यह हमारी समावेशी राष्ट्रीय दृष्टि का द्वितीय आयाम था।

उस अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत दृष्टि का तीसरा आयाम यह था कि यह महान समावेशी सहिष्णु समाज, जिस समाज को हम आज हिन्दू समाज के रूप में वर्णित करते हैं, वह आध्यात्मिकता के आधार पर, सनातन धर्म के आधार पर, सनातम धर्म द्वारा निर्मित एक महान संस्कृति के आधार पर विकसित हुआ था। जिस वर्णाश्रम धर्म ने इस महान समाज को आकार दिया है, वह आज एक अंग्रेज़ी वाक्यांश—'जाति व्यवस्था' में परिवर्तित हो गया है। वर्तमान में वर्णाश्रम धर्म के परिवर्तित-परिणीती रूप 'जाति व्यवस्था' पर हर कोई सभी प्रकार के अपराधों के आक्षेपों को गढ़ने में व्यस्त है। परंतु यह वर्णाश्रम धर्म ही था, जिसने एक जटिल अन्योन्याश्रित सामाजिक व्यवस्था का निर्माण किया था। हमारे सांस्कृतिक राष्ट्र की यह अन्योन्याश्रित सामाजिक व्यवस्था, भाग्य के सभी उतार-चढ़ाव के बावजूद, इतने सारे विदेशी आक्रमणों के बावजूद, इन अनगिनत युगों के परिवर्तन के बावजूद आज तक जीवंतता और उत्साह के साथ यथावत है। हमारे सभी समकालीन महापुरुषों ने वर्णाश्रम धर्म की रक्षा की है। तर्कों के सापेक्ष में "वर्णाश्रम धर्म" के औचित्य का समर्थन कर स्वामी दयानंद ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है, बंकिम चंद्र ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है, विवेकानंद ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है, महात्मा गांधी ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है, मदन मोहन मालवीय ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है, लोकमान्य तिलक ने "वर्णाश्रम धर्म" की रक्षा की है। ये सभी महापुरुष इस तर्क पर एकमत रहे हैं कि "वर्णाश्रम धर्म" ने समावेशी

सहिष्णु हिन्दू समाज को विनाश से बचाया है—ज्ञातव्य है कि भारत के बाहर कई समाजों को ईसाईयत, जिहादी इस्लाम और नृशंस साम्यवाद का दंश सहने के पश्चात् अपने पितरों की संस्कृति से च्युत होकर पथभ्रष्ट होना पड़ा था। ''वर्णाश्रम धर्म'' एवं 'जाति व्यवस्था' सर्वथा पृथक है तथा ''वर्णाश्रम धर्म'' की रक्षा में भारत एवं भारतीयों के जीवन तथा वैभव की रक्षा तथा सुरक्षा निहित है। ''वर्णाश्रम धर्म'' के आधार पर स्थापित समावेशी सहिष्णु जटिल अन्योन्याश्रित सामाजिक व्यवस्था ही हमारी समावेशी राष्ट्रीय दृष्टि का तृतीय आयाम था।

उस अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत दृष्टि का चौथा आयाम यह था कि इस महान समाज अर्थात् इस हिन्दू समाज का अपना एक स्वर्णिम इतिहास था—यह समाज कैसे उत्पन्न हुआ, कैसे विकसित हुआ, इसने एक ऐसी आध्यात्मिकता का निर्माण कैसे किया जो कई प्राचीन सभ्यताओं—ग्रीस, रोम, चीन, मिस्र, फ़ारस जैसे राष्ट्रों के अंगभूतों की आध्यात्मिकता के समान थी। हमें बताया गया है कि भारत का इतिहास—समावेशी सहिष्णु हिन्दू समाज का, समावेशी सहिष्णु हिन्दू संस्कृति का, समावेशी सहिष्णु हिन्दू आध्यात्मिकता का तथा समावेशी सहिष्णु सांस्कृतिक हिन्दू राष्ट्र का इतिहास था—न कि नृशंस असहिष्णु जिहादी मुसलमानों तथा ईसाई हमलावर लुटेरों का इतिहास था जैसा कि आज हमें छलपूर्वक पढ़ाया जा रहा है। वस्तुतः भारत का विशुद्ध-सदाशयी इतिहास वास्तविकता में समावेशी सहिष्णु हिन्दू धर्म का ही इतिहास है, यह उस समावेशी राष्ट्रीय दृष्टि का चतुर्थ आयाम था।

अनादिकालीन शाश्वत समावेशी सभ्य-सुसंस्कृत दृष्टि का आखिरी और पंचम आयाम जिस पर इन महापुरुषों ने विशेष बल दिया था, जिसकी उन्होंने बार-बार पुष्टि की थी, वह यह था कि भारतवर्ष की यह पावन भूमि

सांस्कृतिक रूप से अविभाज्य-अखंड धरा थी; यह समावेशी सहिष्णु हिन्दू समाज, समावेशी सहिष्णु हिन्दू संस्कृति, समावेशी सहिष्णु हिन्दू आध्यात्मिकता की गंगोत्री सरीखी उद्गम-स्थली थी; यह समावेशी सहिष्णु हिन्दू राष्ट्र की मातृभूमि थी; और अतः हम ''वसुधैव कुटुम्बकम्''[4] तथा ''सर्वं खल्विदं ब्रह्मम्''[5] का अक्षरक्षः पालन करते हुए अन्य समुदायों के इस पावन भूमि पर आगमन को स्वागत योग्य मानते हैं, बशर्ते वे समावेशी सहिष्णु हिन्दू समाज और समावेशी सहिष्णु हिन्दू संस्कृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए अपने पक्षपातपूर्ण असहिष्णुता का सर्वथा परित्याग करने के लिए कटिबद्ध हों। उन्होंने तब अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, हिन्दुस्तान और बांग्लादेश को एक ही अखंड-अनहद सांस्कृतिक पावन भूमि के रूप में चिह्नित किया था। आज भारतवर्ष कई इकाइयों में विभाजित है, जो न केवल राजनीतिक रूप से, वरन् सांस्कृतिक रूप से भी एक-दूसरे के प्रति शत्रुभाव रखती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि हम उस वैचारिक विभाजन से सहमत हो गए हैं। परंतु हमारे महापुरुषों ने हमें जो राष्ट्रीय दृष्टि दी थी, वह भारतवर्ष को न केवल भौगोलिक दृष्टि से, वरन् सांस्कृतिक दृष्टि से भी अविभाज्य बनाने की थी। वह राष्ट्रीय दृष्टि इस शताब्दी के प्रथम दशक में स्वदेशी आंदोलन के दौरान हमारे समक्ष प्रस्फुटित हो कर उभरी

---

[4]*अनुवादक की टिप्पणी*—अयं बन्धुरयं नेति गणना लघुचेतसाम्।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥— (महोपनिषद् अध्याय 6, मंत्र 71)

अर्थात्—यह (मेरा) बन्धु है और यह नहीं है, इस तरह की गणना छोटे चित्त (सङ्कुचित मन) वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों के लिए तो (सम्पूर्ण) धरती ही परिवार है।

[5]*अनुवादक की टिप्पणी*—''सब ब्रह्म ही है'' (छान्दोग्य उपनिषद् 3/14/1—सामवेद)

थी। भारत को भौगोलिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अविभाज्य बनाने के यज्ञ में हर भारतीय को समिधा के रूप में सततता, निरंतरता एवं समर्पण-भाव के साथ तत्पर तथा संलग्न होना चाहिए, यह हमारी समावेशी राष्ट्रीय दृष्टि का पंचम आयाम था।

उसी समय कुछ अन्य दृष्टियाँ भी राष्ट्रीय पटल पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए संघर्ष कर रही थीं। भारत की अखंडता का विरोध करने वाली उन अन्य अलगाववादी असहिष्णु दृष्टियों को अंग्रेज़ों ने हम वृहत् समावेशी सहिष्णु भारतीयों पर थोपी गई अपनी शिक्षा प्रणाली के माध्यम से अत्युत्तम कवच, अतिशय सहयोग तथा अत्यधिक लाभ प्रदान करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। यह वही अलगाववाद तथा असहिष्णु ईसाईयत और जिहादी इस्लामिक लुटेरों की पक्षसमर्थक और पक्षपोषक शिक्षा व्यवस्था थी जो आज भी सुनियोजित तरीके से हमारे देश में अपने वर्चस्व में उत्तरोत्तर वृद्धि कर रही है। यह अलगाववादी तथा असहिष्णु ईसाईयत और जिहादी इस्लामिक लुटेरों की पक्षसमर्थक और पक्षपोषक शिक्षा प्रणाली भारत की समावेशी सहिष्णु राष्ट्रीय दृष्टि से इतर उन अन्य अलगाववादी असहिष्णु दृष्टियों को सतत रूप से प्रायोजित और प्रसारित कर क्रमश: पुष्ट कर रही है।

प्रथम साम्राज्यवादी दृष्टि इस्लामी साम्राज्यवाद से प्रेरित थी। इसमें कहा गया कि भारत, पूर्व-इस्लामिक अरब तथा पूर्व-इस्लामिक फ़ारस की तरह और इस्लाम द्वारा जीती गई कई अन्य प्राचीन भूमियों की तरह, ''अन्धकार की भूमि'' थी। इसमें कहा गया कि भारत को इस्लाम की ''नूर (रोशनी)'' से प्रकाशित करना होगा तथा दार-उल-इस्लाम में परिवर्तित करना होगा।

इसके पश्चात् द्वितीय साम्राज्यवादी दृष्टि ईसाई साम्राज्यवाद द्वारा प्रदान की गई थी। इसमें भी यह कहा गया कि भारत अंधकार, बर्बरता, बुतपरस्ती और अविश्वासियों की भूमि है। इसमें कहा गया कि ''ईसाईयत'' की ''*लाइट* (रोशनी)'' को भारत में स्थापित करना होगा और भारत को ईसा मसीह की भूमि में परिवर्तित करना होगा।

हम जागृत भारतवासियों पर मनोवैज्ञाविक दबाब बनाने के लिए ''श्वेत व्यक्ति पर बोझ'' के रूप में तृतीय साम्राज्यवादी दृष्टि को हम पर थोपा गया। इस अलगाववादी असहिष्णु दृष्टि को प्रायोजित-प्रसारित करने में नृशंस जिहादी इस्लामी और ईसाई क्रूसेडर्स लुटेरों के साम्राज्यवादी हितों के संयुक्त अंश थे। परंतु यह तर्क और मानवतावाद की भाषा का मुखौटा लगाकर बात करती थी। यह तथाकथित प्रबुद्ध भाषा-शैली में बात करने का ढ़ोंग करती थी। इसमें कहा गया था कि भारत गरीबों, अशिक्षितों, दलितों, शोषितों और निर्बल मनुष्यों की भूमि है जिन्हें रोटी दी जानी चाहिए, जिन्हें शिक्षा दी जानी चाहिए, जिन्हें स्वास्थ्य-सेवा का लाभ दिया जाना चाहिए, जिन्हें ब्रिटिश उपदेशकों या विदेशों से आयातित पश्चिमी संस्कृति द्वारा पश्चिमी मूल्यों पर आधारित आत्म-विश्वास प्रणाली दी जानी चाहिए।

तत्पश्चात् साम्यवाद के रूप में पश्चिम से एक और साम्राज्यवादी दृष्टि ने भारत में अपने पैर पसारे। इस दृष्टि में कहा गया था कि भारत एक औपनिवेशिक और अर्ध-औपनिवेशिक समाज था, जो शोषक और शोषित वर्गों, उत्पीड़कों और उत्पीड़ितों में विभाजित था और यह कम्युनिस्ट पार्टी का कर्तव्य है कि वह भारत को इस आलस्य और शोषण तथा उत्पादन की शक्तियों के पाश से मुक्त करे। यह भारत में चर्तुथ साम्राज्यवादी दृष्टि थी।

इन सभी साम्राज्यवादी दृष्टियों के एक साथ मिल जाने का संचयी दुष्प्रभाव हमारे लिए न केवल असाधारण रूप से गंभीर वरन् विनाशकारी भी रहा है। आज जो दृष्टि राष्ट्रीय पटल पर प्रचलित है, विशेषकर हमारे शासक वर्गों के मध्य, हिन्दू बुद्धिजीवियों के मध्य, हिन्दू अभिजात्य वर्ग के मध्य—वह स्वदेशी आंदोलन तथा हमारे अपने महापुरुषों, द्वारा प्रदत्त राष्ट्रीय दृष्टि के सर्वथा विपरीत है।

आज हमें बताया जाता है कि भारतवर्ष एक अविभाज्य इकाई नहीं है, यह एक अखंड राष्ट्र नहीं है, यह विभिन्न राष्ट्रीयताओं का समूह है। हमें बताया गया है कि भारत एक उपमहाद्वीप है और विभिन्न राष्ट्रीयताओं द्वारा अपनी मातृभूमि के लिए संघर्ष करने के स्वाभाविक परिणामस्वरूप भारत का विभाजन अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, हिन्दुस्तान और बांग्लादेश में हुआ है। अत: वर्तमान में किसी भी विशिष्ट-विशेष समाज द्वारा भारत को अपनी मातृभूमि के रूप में प्रस्तुत करने का दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता है, विशेषकर हिन्दू समाज द्वारा किया जा रहा यह दावा तो बिल्कुल भी नहीं।

तब हमें छलपूर्वक तरीके से ग़ुमराह करके यह बताया गया है कि इस उपमहाद्वीप के इतिहास का सम्बन्ध हिन्दू समाज तथा हिन्दू राष्ट्र के इतिहास से नहीं है। यह देश वर्तमान में एक प्रकार की धर्मशाला के रूप में माना जाना चाहिए जिसमें पश्चिम, पूर्व और अन्य दिशाओं से सभी प्रकार के आक्रमणकारी आए थे। भारत का इतिहास विदेशी आक्रमणकारियों का इतिहास बन गया है। इसलिए जब आप हमारे विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और स्कूलों में इतिहास के शिक्षण को देखते हैं, तो आप पाते हैं कि प्राचीन भारतीय इतिहास—हिन्दू काल है, आप पाते हैं कि मध्ययुगीन भारतीय इतिहास—मुस्लिम काल है, और आप पाते हैं कि आधुनिक भारतीय इतिहास—ब्रिटिश काल है। वर्तमान में हमें समसामयिक काल अर्थात्

अंग्रेज़ों से स्वतंत्रता के पश्चात् का काल, जिसके अपने वास्तुकार और पिता हैं, के विषय में भी जानकारी दी जा रही है।

हमें पुनः छलपूर्वक तरीके से ग़ुमराह करके यह बताया गया है कि भारतीय समाज एक समरूप समाज नहीं है। हमें बताया गया है कि भारत बहुनस्लीय, बहु-राष्ट्रीय, बहु-भाषी और कई अन्य बहु-बहु लक्षणों वाला है। हमें यह भी बताया जाता है कि भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति नहीं है, यह स्वदेशी और आयातित कई संस्कृतियों से बनी एक मिश्रित संस्कृति है। यह मुझे कभी-कभी अत्यधिक हास्यास्पद लगता है। जब हम भारतीय संगीत की बात करते हैं, तो पाते हैं कि यह हिन्दू संगीत है। जब हम भारतीय मूर्तिकला की बात करते हैं तो हम पाते हैं कि यह हिन्दू मूर्तिकला है। जब हम भारतीय वास्तुकला के विषय में बात करते हैं, तो हम पाते हैं कि विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा संयोजित किए गए कुछ गौण अंशों को छोड़कर वस्तुतः यह हिन्दू वास्तुकला ही है। भारतीय साहित्य का लगभग निन्यानवे प्रतिशत हिस्सा हिन्दू साहित्य का ही है। निस्संदेह ये सभी अमूल्य हिन्दू धरोहरों की विरासत हैं। वे हिन्दू ही थे जिन्होंने भारत को बनाया, वे हिन्दू ही हैं जिन्होंने भारत को बनाए रखा है। वे हिन्दू ही हैं, जो अभी भी भारत की अमूल्य धरोहरों का विकास और विस्तार कर रहे हैं। फिर भी, जब हमें छलपूर्वक तरीके से ग़ुमराह करके यह बताया जाता है कि भारत की संस्कृति—हिन्दू संस्कृति नहीं है और भारत की संस्कृति का इतिहास—हिन्दू इतिहास नहीं है, तो वस्तुतः हर समावेशी सहिष्णु भारतीय को अप्रसन्न-रुष्ट-क्रोधित होना चाहिए। वस्तुतः शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के साथ भारत में निवासरत ''हिन्दू''—विदेशियों द्वारा समावेशी सहिष्णु भारतीयों के लिए प्रयुक्त सांस्कृतिक-सामाजिक-भौगोलिक शब्द है। परन्तु वर्तमान में जो भी समावेशी सहिष्णु हिन्दू संस्कृति की बात करते हैं, उन पर सांप्रदायिक होने का आरोप लगाया जाता है।

परंतु सबसे विस्मयकारक बात यह हुई है कि इस देश के धर्म का स्वरूप वर्तमान में सनातन धर्म नहीं रहा। सनातन धर्म को वर्तमान में एक प्रकार का आदिम अंधविश्वास माना जाता है। कुछ लोग वेदांत को अपना लेते हैं और इसके विषय में अत्यधिक चर्चा करते हैं। कुछ अन्य लोग गीता पर विचार करते हैं और गीता के विषय में वार्ता-विमर्श करते हैं। कुछ अन्य लोग सनातन धर्म, योग आदि के अन्य पहलुओं पर विचार करते हैं और उनके विषय में वार्ता-विमर्श करते हैं। वे नाम और प्रसिद्धि अर्जित करते हैं, पुस्तकें लिखते हैं और व्याख्यान देते हैं। परंतु उन्हें जब यह बताया जाता है कि यह सनातन धर्म ही था जिसने यह सारी आध्यात्मिकता, यह सारा दर्शन, यह सारा क़ानून, यह सारी संस्कृति का सृजन किया हैं, तो बहुत से लोग इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। सनातन धर्म का स्थान एक नए धर्म ने ले लिया है। यह नया धर्म— *सैक्युलेरिज्म* है।

वर्तमान में हमें छलपूर्वक तरीके से ग़ुमराह करके यह बताया गया है कि *सैक्युलेरिज्म* के माध्यम से ही भारत एक अखंड राष्ट्र बनेगा, *सैक्युलेरिज्म* के आधार पर राष्ट्रीय एकता स्थापित होगी। अत: हमारे पास एक ''राष्ट्रीय एकता परिषद'' है। यह शिक्षा मंत्रालय को कठोर निर्देश देता है कि भारत के इतिहास को फिर से लिखा जाना चाहिए ताकि इस देश के नृशंस जिहादी मुस्लिम हमलावर लुटेरों को विदेशी न माना जाए, ताकि नृशंस जिहादी इस्लामी साम्राज्यवाद को कुछ अप्रिय, कुछ विदेशी, कुछ बाहर से आयातित हुआ न माना जाए। वर्तमान में हमें नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम को एक भारतीय *रिलीजन* के रूप में स्वीकार करना होगा, एक ऐसे *रिलीजन* के रूप में जिसका भारत में अपने समावेशी सहिष्णु सनातन धर्म जितना ही गौरवपूर्ण स्थान होना चाहिए। इस कपटपूर्ण कुतर्क का अभी तक हमारे भारतीय इतिहास के तथाकथित

ब्रिटिश काल के साम्राज्यवाद तक विस्तार नहीं किया गया है। परंतु कालांतर में ऐसी मुखर आवाज़ें उठ सकती हैं, जो माँग करेंगी कि नृशंज अंग्रेज़ों को आक्रमणकारी और भारतीयों का शोषण करने वाला नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि आखिरकार, उन्होंने हमें अंग्रेज़ी शिक्षा, अंग्रेज़ी साहित्य, चिकित्सालय, स्कूल, कॉलेज, सड़कें, रेलगाड़ी, हवाई जहाज और सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाएँ दीं हैं।

इस समय इस देश में यही भ्रम की स्थिति बनी हुई है। स्वदेशी आंदोलन के दौरान जो राष्ट्रीय दृष्टि प्रस्फुटित हुई थी, जिसने भारत के जनमानस को संगठित किया था और जिसने उसे अंग्रज़ों से स्वतंत्रता के संग्राम में अग्रसारित किया था, वर्तमान में कमोबेश उस पर पूरी तरह से ग्रहण लग गया है। भारत में कहीं और इस राष्ट्रीय दृष्टि को इतना ग्रहण नहीं लगा है जितना कि बंगाल में या केरल में या भारत के कुछ अन्य भागों में जहाँ अंग्रज़ी शिक्षा ने अन्य स्थानों की तुलना में तीव्रता से प्रसार किया है। इसके परिणामस्वरूप वर्तमान में नित्य तथा सतत रूप से नई विकट स्थिति उत्पन्न हो रही है।

आइए हम *सैक्युलेरिज्म* को अपनाएँ। यह एक अवधारणा है जिसे हमने आधुनिक यूरोप से आयातित किया है। अलगाववादी असहिष्णु ईसाई चर्चों ने यूरोप पर 100–200 वर्षों का युद्ध थोपकर दुनिया भर में बहुत खून–खराबा मचाया था। अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत के आगमन के साथ यूरोप में एक अंधेरी रात छा गई थी। मानवतावाद, तर्कवाद, सार्वभौमिकतावाद और अन्य सभी मूल्य जिन्हें मानवीय मूल्यों के रूप में चिह्नित किया जाता है, अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत के बोझ के नीचे दब गए थे। यूरोप में कुछ लोगों ने अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत के चरित्र, विशेषकर राज्य पर चर्च की पकड़ पर प्रश्न उठाना प्रांरभ कर दिया।

यूरोप का भारत, चीन और कुछ अन्य महान प्राचीन सभ्यताओं के साथ प्राचीनकाल से संपर्क स्थापित था। इन महान प्राचीन सभ्यताओं से संपर्क के कारण यूरोप में मानवतावाद, तर्कवाद और सार्वभौमिकता का पुनरुत्थान हुआ। अलगाववादी असहिष्णु शोषक ईसाई चर्च के विरुद्ध व्यापक संघर्ष प्रारंभ हुआ और समय के साथ राज्यसत्ता पर उसकी पकड़ क्षीण हो गई। इसी संघर्ष ने यूरोप में *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा को जन्म दिया। यह एक बहुत ही स्वस्थ अवधारणा थी, विशेषकर उन राष्ट्रों के लिए जो अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत के अमानवीय पवित्र समझी जाने वाली पुस्तकों के कारण पीड़ित थे। निस्संदेह अलगाववादी असहिष्णु इस्लामिक राष्ट्रों में पीड़ितों के लिए *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा को अक्षरश: लागू करने की महती आवश्यकता है।

परंतु आज भारत में लोग त्रुटिवश हिन्दू समाज को *सैक्युलेरिज्म* की सलाह देते हैं, जिसका सहस्राब्दियों का इतिहास ही समावेशी सहिष्णु पंथनिरपेक्षता का रहा है जो वस्तुत: अलगाववादी असहिष्णु जिहादी मुसलमानों अथवा ईसाई लुटेरों के इतिहास के समान नृशंसता का साक्षी नहीं रहा है। हाल ही में मैं सुदूर पूर्व में यात्रा कर रहा था और चीन के कुछ बौद्ध भिक्षुओं से मिला। मैंने उनसे कहा: ''बौद्ध धर्म भारत से चीन में आया था। परंतु आपके पास अपने स्वयं के प्राचीन धर्म थे। आपके पास कन्फ़्यूशीवाद[6]

---

[6]*अनुवादक की टिप्पणी*—चीनी दार्शनिक कन्फ़्यूशियस के विचारों पर आधारित एक विश्वास प्रणाली है। यह ईश्वरवादी विश्वास प्रणाली नहीं है, वरन् नैतिक सिद्धांतों के पालन पर आधारित है। कन्फ़्यूशीवाद में देवता, प्रतिस्पर्धी प्रतिष्ठान, या पादरी जैसी औपचारिक संस्थागत संरचना का अभाव है। कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार, परोपकार करना मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार मनुष्य को परोपकार करने का स्वाभाविक गुण ईश्वर से प्राप्त हुआ है। कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार, किसी मनुष्य के द्वारा इस स्वाभाविक गुण के अनुसार आचरण या कार्य न करने को ईश्वर की अवज्ञा के समान माना जाएगा। ...

था। आपके पास ताओवाद[7] था। क्या बौद्ध धर्म चीन में कन्फ़्यूशीवाद या ताओवाद के साथ संघर्ष करके स्थापित हुआ था? उन्होंने कहा: ''नहीं, कभी नहीं।'' चीन में इनके मध्य संघर्ष का एक भी उदाहरण नहीं था क्योंकि कन्फ़्यूशीवाद तथा ताओवाद भी उसी समान स्रोत से उत्पन्न हुए हैं जिस स्रोत से सनातन धर्म का आविर्भाव हुआ है, जिस स्रोत से जैन धर्म का आविर्भाव हुआ है, जिस स्रोत से वैष्णववाद का आविर्भाव हुआ है। वे सभी मानव जाति के लिए एक ही आध्यात्मिक संदेश के पृथक-पृथक नाम हैं। मैंने यह जानने के लिए जापान में कुछ लोगों से भी वार्ता की कि क्या बौद्ध धर्म जापान में शिंटोवाद[8] के साथ संघर्ष करके स्थापित हुआ था जो जापान का प्राचीन धर्म है। उन्होंने भी यह कहा ''नहीं,'' दोनों धर्मों में कभी भी संघर्ष नहीं हुआ है। दोनों धर्म जापान में आज भी आपसी सौहार्द के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व में रह रहे हैं। मेरी मुलाकात एक टैक्सी ड्राइवर से

... कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार, मनुष्य को दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा वह दूसरों से अपने प्रति व्यवहार करने की अपेक्षा रखता है। कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार, शासक का धर्म न्यायसंगत आज्ञा देना है और शासित का कर्तव्य उस आज्ञा का पालन करना है। कन्फ़्यूशीवाद के अनुसार, पिता, पति, और बड़े भाई का धर्म न्यायसंगत आदेश देना है और पुत्र, पत्नी, और छोटे भाई का कर्तव्य उस आज्ञा का पालन करना है।

[7]*अनुवादक की टिप्पणी*—ताओवाद, चीन का एक मूल दर्शन तथा एक विविध दार्शनिक और धार्मिक परंपरा है। ताओवाद के अनुसार, जीवन जीने के लिए ताओ के मूल सिद्धांत का पालन करना चाहिए। ताओवाद में नैतिकता को बहुत महत्त्व दिया जाता है। ताओवाद चोरी करने, झूठ बोलने, और जान लेने के विरुद्ध है। ताओवाद में अमरत्व को प्राप्त करना एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। ताओवाद के अनुसार, मनुष्य प्रकृति का अभिन्न अंग है। ताओवाद के अनुसार, मनुष्य को ब्रह्मांड की प्राकृतिक, संतुलित व्यवस्था के साथ सामंजस्य बनाए रखना चाहिए।

[8]*अनुवादक की टिप्पणी*—शिंटोवाद, प्रकृति और पूर्वजों की आत्माओं की पूजा पर केंद्रित है। शिंटो धर्म के अनुयायी मानते हैं कि प्राकृतिक दुनिया में आध्यात्मिक शक्तियाँ उपस्थित हैं।

हुई जो असाधारण रूप से बुद्धिमान व्यक्ति था। उसने कहा: ''मैं शिंटोवादी और बौद्ध दोनों हूँ।'' इसी तरह प्राचीन ग्रीस में, प्राचीन रोम में, संपूर्ण एशिया और यूरोप में तथा संपूर्ण प्राचीन विश्व में, ईसाइयत के उदय से पूर्व, हमारी पृथ्वी कभी कोई उपासना पद्धति के आधार पर पंथों के मध्य युद्ध की साक्षी नहीं रही है।

ईसाईयत के अपने उत्थान के लिए नितांत पृथक उपासना पद्धति के अनुयायियों के विरुद्ध धार्मिक आधार पर युद्ध करना प्रारम्भ किया। नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम के उदय के पश्चात् वे नितांत धार्मिक आधार पर लड़े जाने वाले युद्ध अत्यधिक अमानवीय एवं नियमित से हो गए। परंतु यूरोप में मानवतावाद, तर्कवाद और सार्वभौमिकता की लहर चल रही थी, जिसने राज्य की सत्ता पर ईसाईयत की पकड़ को कमज़ोर तथा क्षीण कर दिया था। इसके फलस्वरूप *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा ने जन्म लिया। जैसा कि मैंने आपको बताया है कि यूरोप के संदर्भ में *सैक्युलेरिज्म* एक बहुत ही शुभ अवधारणा थी। इसके परिणामस्वरूप, यूरोपीय समाज विकास के पथ पर अग्रसर हुआ है, यूरोपीय विज्ञान विकसित हुआ है, यूरोपीय प्रौद्योगिकी विकसित हुई है और यूरोप के लोगों के लिए सामाजिक कल्याण प्रणाली में सुधार हुआ है। ये सारी बातें *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा से उत्सर्जित हुईं हैं।

हालाँकि हिन्दू समाज सदैव से स्वाभाविक रूप से एक धर्मनिरपेक्ष समाज रहा है। हिन्दू समाज ने कभी भी किसी अलगाववादी असहिष्णु उपासना पद्धति पर आधारित राज्य की स्थापना नहीं की है। उदाहरण के लिए आप किसी भी हिन्दू राजा को ले सकते हैं। आपको सहस्राब्दियों के इतिहास में ऐसा कोई कट्टरवादी हिन्दू राजा कभी नहीं मिलेगा, जो किसी विशेष सम्प्रदाय का धर्मांध पक्षधर हो। व्यक्तिगत रूप से वे बौद्ध धर्म या

जैन धर्म या वैष्णव धर्म या किसी अन्य सम्प्रदाय से संबंधित हो सकते हैं। परंतु वे अपने दरबार में तथा अपने राज्य में सभी उपासना पद्धति के अनुयायियों के प्रति समान रूप से सम्मान, सुरक्षा एवं संरक्षण देने के लिए जाने जाते थे। वस्तुत: वे धार्मिक लोग ही थे, जो राजा से संरक्षण पाने के स्थान पर उसे संरक्षण देते थे। यह कैंटरबरी के आर्चबिशप की तरह नहीं था, जिसे इंग्लैंड के राजा की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। राजा आस्था का रक्षक होता है। हिन्दू राजा को मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए ऋषियों, मुनियों और साधुओं के पास जाना पड़ता था।

ऐसे भारत देश में, ऐसे समावेशी सहिष्णु सनातन भारतीय समाज में *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा यूरोप से आयातित की गई है। इतना ही नहीं, *सैक्युलेरिज्म* की अवधारणा को समावेशी सहिष्णु हिन्दू समाज के विरुद्ध भी घोषित कर दिया गया है। आज आपको ज्ञात होगा कि *सैक्युलेरिज्म* का अर्थ क्या होता है। जब भी भारत में *सैक्युलेरिज्म* शब्द का उद्घोष अथवा उच्चारण किया जाता है, तो आपको नितांत हिन्दू विरोधी भावना की कल्पना अथवा अनुभूति कराने का प्रयत्न किया जाता है। आज भारत में *सैक्युलेरिज्म* का अर्थ तथा पर्याय है—हिन्दू समाज की निंदा, हिन्दू संस्कृति की निंदा, हिन्दू इतिहास की निंदा। वस्तुत: *सैक्युलेरिज्म* का अर्थ उस हर वस्तु की निंदा से है जो हिन्दुओं से सम्बंधित है। भारत की अखंडता के विरोधियों द्वारा 'हिन्दू' शब्द को ही, एक मलिन-घिनौना शब्द बनाने का प्रयास सतत रूप से किया जा रहा है। *सैक्युलेरिज्म* की भाषा में कहें तो मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, ईसाई अल्पसंख्यक हैं, परंतु हिन्दू "क्रूर" बहुसंख्यक हैं। अत: नृशंस अलगाववादी असहिष्णु लुटेरों के पक्षसमर्थक तथा पक्षपोषक, समावेशी सहिष्णु सनातन धर्म को अपदस्थ कर उसके स्थान पर *सैक्युलेरिज्म* को एक धर्म के रूप में प्राणप्रतिष्ठित करने का प्रयास सतत

रूप से कर रहे हैं। यह एक नई भारत विरोधी दृष्टि है, जिसने सनातन धर्म की समावेशी सहिष्णु दृष्टि—एक समावेशी सहिष्णु समाज और एक समावेशी सहिष्णु संस्कृति और एक समावेशी सहिष्णुता का इतिहास और समावेशी सहिष्णु सनातन धर्म की दृष्टि पर आधारित अन्य उपक्रमों का स्थान ले लिया है।

इस *सैक्युलेरिज्म* की ज्यादतियों ने तथा इसके हिन्दू-विरोधी रिपुभाव ने धीरे-धीरे हिन्दुओं के मन में यह भावना बलवती कर दी है कि कहीं न कहीं कुछ गंभीर रूप से उनके साथ अनर्थ-अन्याय हो रहा है। इस *सैक्युलेरिज्म* के संरक्षण में तथाकथित अल्पसंख्यक और अधिक आक्रामक हो गए हैं। ईसाई मिशनरियाँ, पश्चिमी देशों की रक्षा और गुप्तचर तथा सरकारों के अन्य विभागों से अरबों डॉलर का अनुदान भारत में उनके द्वारा अथवा उनके दिशानिर्देशन में सम्पादित किए जा रहे भारत विरोधी कार्यों के लिए लाती हैं। वे इस अपार वित्त को मिशनों और चर्चों के निर्माण और धर्मान्तरण करवाने के लिए ख़र्च करती हैं। अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत की ''*लाइट* (रोशनी)'' छल, षड्यंत्र, कपट तथा विदेशी ''*फंड*'' के दुरुपयोग से फैलाई जा रही है। नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम भी इसी पद्धति का उपयोग कर अपना विस्तार करने में संलग्न है। जब से पेट्रो-डॉलर चलन में आया है तथा जब से फ़ारस की खाड़ी में स्थित अरब देश अमीर हुए हैं, तब से भारत में नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम जो वर्ष 1947 सीई में भारत विभाजन के पश्चात् थोड़ा भयभीत हो गया था, मुस्लिम लीग के दिनों के अपने पुराने आत्मविश्वास तथा आक्रमकता को पुन: प्राप्त करने में सफलता अर्जित है। इस्लामी साम्राज्यवाद इस समय जिस आक्रामक आत्मविश्वास की लहर पर सवार है, उसे समझने के लिए केवस इस्लाम के भाषाई प्रेस, विशेषकर उर्दू प्रेस को पढ़ना होगा।

इन सभी नित्य उत्पन्न हो रहीं भारत विरोधी परिस्थितयों के कारण, *सैक्युलेरिज्म* शब्दजाल में निहित प्रपंच, छल, षड्यंत्र तथा कपट को समझने के कारण, कुछ समय से निष्क्रिय पड़ी पुरानी नृशंस अलगाववादी असहिष्णु ईसाइयत–इस्लाम–साम्यवाद की साम्राज्यवादी शक्तियों के नए सिरे से आक्रामक होने के कारण—हिन्दू समाज ने एक प्रकार की नव–जागृति तथा एक नव–प्रकार के पुनरुत्थान का अनुभव किया है। हम पाते हैं कि विश्व हिन्दू परिषद इस पुनरुत्थान को सुदृढ़ करने में तथा इस पुनरुत्थान को नेतृत्व देने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है। परंतु मुझे लगता है कि यह प्रयास तब तक सार्थक सिद्ध नहीं होगा जब तक यह वह सुदृढ़ आधार प्राप्त नहीं करेगा। इस सुदृढ़ आधार की संरचना तथा ध्येय प्राप्ति के लिए स्वदेशी आंदोलन के दिनों की राष्ट्रीय दृष्टि को पुन: प्राप्त करना, पुनर्जीवित करना, पुन: पुष्ट करना और समसामयिक स्थिति में पुनर्व्याख्या करना पूर्वाकाँक्षित शर्त है। यही वह भारत के पक्षपोषण का आवश्यक उपक्रम है जो मैं आज छोटे पैमाने पर तथा अपने सीमित स्तर पर समर्पण भाव से संलग्न होकर निष्पादित कर रहा हूँ। अपने स्तर पर तथा अपनी स्वाभाविक नैसर्गिक रुचियों के अनुसार, हम सभी को निस्वार्थ एवं निष्काम भाव से इसी प्रकार से सकारात्मक गिलहरी प्रयास करने चाहिए।

राष्ट्रीय दृष्टि को पुन: स्थापित करने के लिए हमें सर्वप्रथम जो कार्य करना है, वह यह है कि बिना किसी डर या झिझक के पूरी दुनिया के समक्ष हमें यह घोषणा करनी चाहिए कि यह प्राचीन पावन भूमि, यह भारतवर्ष एक अविभाज्य इकाई है और हम इसके अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, हिन्दुस्तान और बांग्लादेश में विभाजन को मान्यता नहीं देते हैं। कई राष्ट्रों के इतिहास में प्राय: ऐसा दुखद हुआ है कि कुछ साम्राज्यवादी शक्तियों ने उनकी मातृभूमि पर बलात् कब्ज़ा कर लिया था और तत्पश्चात् उनकी ज़मीन के कुछ भागों

को उन्होंने मुख्य भूमि से पृथक कर दिया। हमें अपने मन-मस्तिष्क में यह धारणा स्पष्ट करनी चाहिए कि जिन्हें आज अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश के नाम से जाना जाता है वे हिन्दू मातृभूमि के अंग हैं और हम उन्हें पुन: प्राप्त करने जा रहे हैं। हमें निडरता से इसका उद्‍घोष करना चाहिए कि नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लामिक साम्राज्यवादी लुटेरों की एकजुटता तथा भारत के विरुद्ध एक हजार वर्षों से चलाए जा रहे सतत इस्लामिक आक्रमण को अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश के परिणाम के रूप में स्वीकार नहीं किया जाएगा। शीघ्र ही या कालांतर में हम अपनी पावन मातृभूमि की इस विभाजन-त्रासदी को समाप्त कर देंगे तथा हम अपने उन भाइयों की पुन: घर-वापसी को सुनिश्चित करेंगे, जिन्हें नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लामी साम्राज्यवाद ने हमसे बलात् पृथक किया है।

हमारे कुछ भाई वर्तमान में मुसलमान कहलाते हैं, कुछ भाई ईसाई कहलाते हैं। ये सभी हमारे अपने ही बंधु-बांधव हैं। हमारे मन में उनके विरुद्ध कोई भी मैल नहीं है। परंतु हम इस देश में इस्लाम के रूप में या ईसाईयत के रूप में नृशंस अलगाववादी असहिष्णु साम्राज्यवाद के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करेंगे। नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु साम्राज्यवाद पराजित और तितर-बितर हो गया है। आज भारत में नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लामी साम्राज्यवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। अलगाववादी असहिष्णु ईसाई साम्राज्यवाद भी पराजित और तितर-बितर हो गया है। आज भारत में अलगाववादी असहिष्णु ईसाईयत के लिए कोई स्थान नहीं है। हमें यह सब बहुत स्पष्ट शब्दों में सभी को विदित कराना होगा।

द्वितीय कथन जो हमें बहुत स्पष्ट और निडरता से कहना चाहिए, वह यह है कि भारत का इतिहास हिन्दू समाज का तथा हिन्दू राष्ट्र का इतिहास है

और हम इस इतिहास के किसी भी मुस्लिम या ब्रिटिश काल को नहीं पहचानते हैं। हम मामलुकों या ख़िलजियों या तुग़लक़ों या लोदियों या मुग़लों के किसी भी काल को नहीं पहचानते हैं। इसके स्थान पर हम अपने इतिहास को अपने नायकों के संदर्भ में पढ़ेंगे, पृथ्वी राज चौहान का युग, राणा सांगा का युग, कृष्णदेवराय का युग, राणा प्रताप का युग, शिवाजी का युग इत्यादि। हम यह स्वीकार नहीं करेंगे कि भारत में कभी मुस्लिम साम्राज्य था। इसके स्थान पर हम उस अवधि की व्याख्या राष्ट्रीय प्रतिरोध तथा राष्ट्र की मुक्ति के लिए एक दीर्घकाल तक चलने वाले युद्ध के रूप में करेंगे, जिसमें अंततः इस्लामी साम्राज्यवाद की सर्वाधिक निकृष्ट गति हुई थी। इसी प्रकार, हम नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लामी साम्राज्यवादी लुटेरों तथा घुसपैठियों के अतिरिक्त किसी भी ब्रिटिश वायसरॉय या गवर्नर-जनरल को मान्यता नहीं देंगे। भारतीय इतिहास के साम्राज्यवादी संस्करण जो वर्तमान में हमारे स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाए जा रहे हैं, उन्हें समाप्त करना ही होगा।

भारत में तथाकथित नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु मुस्लिम साम्राज्यवादी लुटेरों का ही विषय लीजिए। अपने पैगंबर की मृत्यु के कुछ ही वर्षों के भीतर, इस्लाम ने एशिया और अफ्रीका के बड़े भागों पर कब्ज़ा कर लिया था। परंतु भारत में अपना पहला कदम रखने में उसे 70 वर्षों का समय लग गया, दिल्ली तक पहुँचने में 500 वर्षों का और समय लगा था तथा दक्षिण भारत तक पहुँचने में कुछ सौ वर्षों का और समय लगा था, इसके तुरंत बाद, नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु मुस्लिम साम्राज्यवादी लुटेरों को पीड़ित भारतीयों द्वारा मुक्ति के लिए छेड़े गए राष्ट्रीय संघर्ष के फलस्वरूप अपने कदम पीछे हटाने के लिए बाध्य होना पड़ा। वीर शिवाजी के उदय के साथ ही जिहादी मुस्लिम साम्राज्यवादी

लुटेरों का अधिकार क्षेत्र सिमटना प्रांरभ हो गया था। अत: हमारे पास नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लामी साम्राज्यवादी लुटेरों के विरुद्ध एक दीर्घकालिक युद्ध तथा दीर्घ राष्ट्रीय संघर्ष का इतिहास है। अत: इस दीर्घकालिक युद्ध को, इस राष्ट्रीय संघर्ष के काल को भारत पर नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु मुसलमानों की विजय या भारतीय इतिहास का मुस्लिम काल कहना सर्वथा अनुचित है।

राष्ट्रीय दृष्टि को पुष्ट करने के लिए तृतीय कथन जिसे हमें उद्घोषित करना चाहिए, वह यह है कि भारत की राष्ट्रीय संस्कृति वस्तुत: हिन्दू संस्कृति है, सनातन धर्म की संस्कृति है। यह एक विशाल और विविध संस्कृति है। परंतु साथ ही यह एक ऐसी संस्कृति है जो मानव जाति के कल्याण के लिए प्राकृतिक रूप से उत्पन्न हुई है। इस संस्कृति में कुछ भी कृत्रिम नहीं है, कुछ भी ऐसा नहीं है जो नृशंस अलगाववादी असहिष्णु मनुष्य के कपटी-स्वार्थी बाह्य मस्तिष्क द्वारा निर्मित किया गया हो, कुछ भी ऐसा नहीं है जो अन्य मनुष्यों पर बलपूर्वक अथवा कपट करके थोपा गया हो जैसा कि ईसाईयत, इस्लाम और साम्यवाद की संस्कृतियों के विषय में है। कोई भी संस्कृति जो हिन्दू संस्कृति, सनातन धर्म की संस्कृति के साथ परस्पर सहिष्णुता के आधार पर समझौता करने के लिए तैयार नहीं है, उसे भारत से पलायन करना ही होगा। 'अल्पसंख्यक अधिकारों' के नाम पर भारत की पावन धरती पर किसी भी अलगाववादी असहिष्णु विदेशी संस्कृति को पनपने देने के लिए कोई स्थान नहीं दिया जाना चाहिए।

चतुर्थ कथन जिसे हमें उद्घोषित करना चाहिए, वह यह है कि भारत में हिन्दू समाज ही राष्ट्र का समाज है। यह एक वृहत्ता-विविधता-विपुलता से ओत-प्रोत विशाल समाज है, जिसने मानव स्वभाव की अनंत अभिव्यक्तियों को अनुमति दी है, जिसने सभी प्रकार की सामाजिक परंपराओं को स्वीकृति

दी है। आज हम पर हमारे तथाकथित आदिवासियों की उपेक्षा का आरोप लगाया जा रहा है। ये एक ऐसा आरोप है जो प्राय: हम पर लगाया जाता है। परंतु जब आप हिन्दू इतिहास पढ़ेंगे, तो आप पाएँगे कि हमने कभी भी अपने समाज के किसी भी वर्ग की जीवनशैली में हस्तक्षेप नहीं किया है।

हमने विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों के रीति-रिवाजों और परंपराओं और संस्थानों को समायोजित करने के लिए 40 धर्मशास्त्र संकलित किए हैं। फिर हमने धर्मशास्त्रों पर पृथक-पृथक जातियों, पृथक-पृथक वर्णों, पृथक-पृथक क्षेत्रों के अनुरूप 4000 टिप्पणियाँ लिखीं हैं। अत: हिन्दू समाज एक विशाल एवं जटिल समाज है। जो भी समुदाय हिन्दू समाज के साथ परस्पर सहिष्णुता के आधार पर समझौता करने के लिए तैयार नहीं है, उसके लिए वर्तमान में भारत में कोई स्थान नहीं है। हम ऐसे किसी भी अलगाववादी असहिष्णु विदेशी समुदायों को स्वयं को अल्पसंख्यक कहने और विशेष अधिकारों अथवा विशेषाधिकारों के लिए किए जा रहे दावे को स्वीकार नहीं करेंगे।

अंतत: हमें यह घोषित करना होगा कि एकमात्र धर्म जिसे हिन्दू समाज मान्यता देता है, जिसका भारतवर्ष में स्थान है, वह सनातन धर्म की प्राकृतिक आध्यात्मिकता है। यह एक ऐसा धर्म है जो नास्तिकता, अज्ञेयवाद, भौतिकवाद सहित सभी प्रकार की मानवीय आकाँक्षाओं को समायोजित करता है। इसमें धर्म के नाम पर बल प्रयोग, कपट और धोखाधड़ी करके धर्मान्तरण कराने के कुत्सित प्रयास को सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। जो भी बाह्य '*रिलिजन*' भारत में फलना-फूलना चाहता है, उसे सनातन धर्म की आध्यात्मिकता का सम्मान करना ही होगा। आज भारत में नृशंस अलगाववादी असहिष्णुता से ओत-प्रोत साम्राज्यवादी महत्त्वाकाँक्षाओं को पोषित करने वाली जिहादी इस्लाम और क्रूसेडर ईसाईयत जैसी विचारधाराओं के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

इन घोषणाओं के पश्चात् ही राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना संभव है। संपूर्ण भारतवर्ष हिन्दू मातृभूमि है। भारतवर्ष का इतिहास हिन्दू समाज का इतिहास है। भारतवर्ष की राष्ट्रीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति है तथा भारत का राष्ट्रीय धर्म सनातन धर्म है। यह वह राष्ट्रीय दृष्टि है जिसे हमें पुनर्स्थापित तथा पुन: पुष्ट करना होगा।

इस प्रतिज्ञान में कुछ निहितार्थ हैं जिन्हें हमें अपने मन-मस्तिष्क में स्पष्ट रूप से सहेज कर रखना चाहिए। जब तक हम अपने मन-मस्तिष्क में स्पष्ट नहीं होते हैं, जब तक हम वैचारिक रूप से सुसज्जित नहीं होते हैं, जब तक हम अपने से सम्बंधित विषयों में और साथ ही उन शक्तियों के विषयों में समुचित ज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं जिनके विरुद्ध हम युद्धरत हैं, तब तक उनसे प्रत्यक्ष रूप से प्रतियोगिता करने का निर्णय हमारे लिए हानिकारक होगा। अतीत में और वर्तमान में भी हिन्दू समाज के विरुद्ध, हिन्दू संस्कृति के विरुद्ध, सनातन धर्म के विरुद्ध कई प्रकार के वैचारिक आक्रमण किए गए हैं। हम पर ईसाइयत की ओर से वैचारिक आक्रमण किए गए हैं। हम पर इस्लाम की ओर से वैचारिक आक्रमण किए गए हैं। हम पर साम्यवाद की ओर से वैचारिक आक्रमण किए गए हैं। हमने इन सभी आक्रमणों के विरुद्ध रक्षात्मक नीति ही अपनाई है। इससे काम नहीं चलेगा।

आज भारत में हिन्दू का एक ही परिचय तथा पर्याय है तथा हिन्दू एक ऐसा नाम है जिसे साम्प्रदायिकतावादी के रूप में जाना जाता है। इस्लामिक विचारधारा, ईसाई विचारधारा, कम्युनिस्ट विचारधारा—इन सभी ने भारत के शिक्षा जगत-मीडिया-राजनीति में इतनी अधिक पैठ बना ली है कि एक हिन्दू को अपनी ही मातृभूमि में सांप्रदायिक कहा जाने लगा है। यह दुनिया का नौवां या दसवां अजूबा है। दुनिया में इस समय न जाने कितने अजूबे हैं। परंतु ये यकीनन दुनिया का सबसे बड़ा अजूबा है। ऐसा इसलिए हुआ था

क्योंकि हिन्दुओं ने अज्ञानतावश इस्लाम और ईसाईयत को धर्म के रूप में मान्यता दे दी थी। इस मान्यता को ख़ारिज करना होगा। यह राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना से सम्बंधित पहला निहितार्थ है।

आज नृशंस अलगाववादी असहिष्णुता की वैचारिक रीतियों–नीतियों का पालन करने वाले ईसाईयत और इस्लाम, स्वयं को धर्म के रूप में प्रतिस्थापित करने का ढ़ोंग करके विशेषाधिकारों तथा विशेष सुरक्षा की माँग कर रहे हैं। इस्लाम का ही विषय लीजिए। इस्लाम की पाक (पवित्र) समझी जाने वाली पुस्तकें, जिहाद और ग़ैर–मुसलमानों के अमानवीय सामूहिक नरसंहार के आह्वान से भरी हुई हैं। इस्लाम का इतिहास रक्तरंजित रहा है। इस्लाम के इबादत (पूजा) घर अर्थात् मस्जिदें सदैव ग़ैर–मुसलमानों के विरुद्ध आक्रमणों के केंद्र तथा शस्त्रागारों के रूप में कार्य करती रही हैं। फिर भी नृशंस जिहादी अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम दिखावा करता है कि वह एक धर्म है। मैं, अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम और ईसाईयत को धर्म के रूप में मान्यता न देने के विषय से सम्बंधित अकाट्य तर्कों पर विस्तार से चर्चा करने की अपेक्षा कुछ साधारण तथ्यों को उद्धृत करना पसंद करूँगा। यह साधारण तथ्य है कि इस्लाम और ईसाईयत दोनों मानवता को आस्तिक और अविश्वासियों, काफ़िरों और मोमिनों के परस्पर अनन्य समूहों में विभाजित करते हैं, यह प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है कि वे धर्म नहीं हैं वरन् केवल राजनीतिक विचारधाराएँ हैं। अलगाववादी असहिष्णु इस्लाम और ईसाईयत की धर्म के रूप में मान्यता को सिरे से ख़ारिज करना होगा। चाहे इन अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विचारधाराओं के पक्षसमर्थन तथा पक्षपोषण के लिए कितने ही विपुल–वृहद् पुस्तकालय क्यों न तैयार कर लिए गए हों; चाहे कितनी भी हठधर्मिता, विवाद और कुतर्क से ओत–प्रोत पक्षसमर्थक तथा पक्षपोषक कथन क्यों न गढ़े गए हों; हमें मानवता एवं

सभ्यता के रक्षार्थ हेतु उन्हें अस्वीकार करना ही होगा। हमें घर-घर जाकर यह घोषणा करनी होगी कि हम ईसाईयत और इस्लाम को धर्म के रूप में मान्यता नहीं देते हैं।

परंतु हम स्वयं में यह साहस तब तक विकसित नहीं कर पाएँगे, जब तक हम जो कहना चाहते हैं उसमें निहित सत्यता के प्रति हम पूरी तरह से आश्वस्त नहीं हो जाते हैं और जब तक हम इन तथाकथित छद्म धर्मों का गहराई से अध्ययन नहीं कर लेते हैं तब तक हमें दृढ़ विश्वास नहीं होगा कि ये वस्तुत: धर्म नहीं हैं वरन् अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय राजनीतिक विचारधाराएँ हैं। मुझे श्री रामस्वरूप जी के मार्गदर्शन में अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय इस्लाम और ईसाईयत का अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हुआ है, जिन्हें उनकी तथाकथित *थियोलॉजी*[9] अर्थात् धर्मग्रंथों और पवित्र समझी जाने वाली परंपराओं का गहरा तथा समुचित ज्ञान है। अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय इस्लाम और ईसाईयत की किताबों में बहुत सारी *थियोलॉजी* है, बहुत सारी नृशंस विचारधाराएँ है। परंतु उनमें सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित आध्यामिकता नहीं है। क्या सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित आध्यामिकता के बिना किसी धर्म का अस्तित्व हो सकता है? वस्तुत: धर्म का सम्बन्ध—मनुष्य द्वारा सार्वभौमिक मूल्यों का पालन करने से है, मनुष्य की स्वयं के द्वारा आध्यामिक खोज से है, मनुष्य

[9]*अनुवादक की टिप्पणी*—देवत्व या परमात्मा की प्रकृति का अध्ययन या धार्मिक विश्वासों का व्यवस्थित अध्ययन है। इसमें सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित आध्यामिकता का होना अनिवार्य माना जाता है। *थियोलॉजी* अर्थात् धर्मशास्त्र का प्रयोग किसी धार्मिक परंपरा का प्रचार, सुधार, या औचित्य सिद्ध करने के लिए किया जा सकता है। *थियोलॉजी* अर्थात् धर्मशास्त्र का प्रयोग किसी धार्मिक परंपरा या विश्वदृष्टि की तुलना करने, चुनौती देने, या विरोध करने के लिए भी किया जा सकता है।

की अपनी आत्मा से है, मनुष्य की आतंरिक प्रेरणाओं से है, मनुष्य की व्यक्तिगत वृहत् आध्यामिक आकाँक्षाओं से है। परंतु हमें अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय ईसाईयत और इस्लाम की पवित्र समझी जाने वाली किताबों में सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित आध्यामिकता का लेशमात्र अंश भी नहीं मिलता है। हम अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय ईसाईयत और इस्लाम की पवित्र समझी जाने वाली किताबों में जो पाते हैं वह नृशंस आक्रमण की राजनीतिक विचारधारा है, हम वहाँ जो पाते हैं वह अन्य विचारधारा अथवा उपासना पद्धति के लोगों पर छल-बल-कपट से विजय प्राप्त करने की पद्धतियाँ तथा उन्हें अपनी अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विचारधारा के साथ संयोजित करने की साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाएँ।

यह राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना से सम्बंधित द्वितीय निहितार्थ है कि जिन मुसलमानों और ईसाइयों को अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विदेशी विचारधाराओं के दायरे में छल-बल-कपट से बाध्य करके संयोजित किया गया है, उन्हें उनके पैतृक विश्वास प्रणाली में वापस लाना होगा। वे हमारे अपने ही लोग हैं। जब हम इस्लाम को अस्वीकार करते हैं तो हमें मुसलमानों को अस्वीकार नहीं करना चाहिए। जब हम ईसाईयत को अस्वीकार करते हैं, तो हम ईसाइयों को अस्वीकार नहीं करना चाहिए। वे हमारे अपने मानवीय हाड़-मांस के हैं। उन्हें इस्लाम और ईसाईयत के जेलखानों से, घातक अमानवीय कट्टरता की अंधेरी कोठरियों से स्वाधीन कराना ही होगा।

ये वे निहितार्थ हैं जिन्हें हमें भली-भांति समझना चाहिए। हिन्दू समाज को वैचारिक रूप से सुसज्जित होना होगा। हिन्दू समाज को अपने इतिहास,

अपने धर्मग्रन्थों, अपनी संस्कृति की आध्यामिकता तथा एक राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान को विस्तार एवं गहनता से जानना एवं पहचानना होगा। साथ ही, अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विचारधाराएँ अर्थात्—इस्लाम, ईसाईयत और साम्यवाद के चरित्र तथा आधुनिक भौतिकवाद, जो वर्तमान में अमेरिकी उपभोक्तावाद के रूप में हमारे समक्ष प्रकट हुआ है, के चरित्र को उनके मूल स्रोतों से जानना होगा। वस्तुत: जब तक हमें यह ज्ञान प्राप्त नहीं होता है, तब तक हमें प्रत्यक्ष तीव्र युद्ध में संलग्न नहीं होना चाहिए।

जब तक हिन्दू समाज रक्षात्मक रहेगा पुराने दुश्मन बार-बार पुराने हथियारों का प्रयोग करते करेंगे। वे हमें सांप्रदायिक आदि कहते रहेंगे। हिन्दू समाज वर्ष 1920 सीई से ही रक्षात्मक मुद्रा में है जब कांग्रेस ने अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय इस्लामिक राजनीतिक विचारधारा के रक्षार्थ हेतु ख़िलाफ़त आन्दोलन को समर्थन दिया था। तब से इस्लाम और अन्य विदेशी ताकतें हिन्दुओं पर अधिक आक्रामक हो गईं हैं। इस्लाम कहता रहा है कि वह एकेश्वरवाद का पक्षधर है जबकि हिन्दू धर्म बहुदेववाद का पक्षधर है कि वह जातिविहीन समाज का पक्षधर है जबकि हिन्दू धर्म जातिगत पदानुक्रम का पक्षधर है इत्यादि। वर्तमान में यदि हम यह नहीं जानते हैं कि हिन्दू समाज का चरित्र क्या है, वर्णाश्रम धर्म का चरित्र क्या है तथा यह सामाजिक व्यवस्था हमारे पूरे इतिहास में हमारे महान रक्षक के रूप में कैसे कार्य करती रही है, तो हमें स्वयं को सुप्त मानना चाहिए।

बहुत कम लोग ही इस तथ्य से परिचित हैं कि भारत में मुसलमानों ने सदैव अपने समाज को तीन पृथक-पृथक वर्गों में विभाजित किया है, इस तथ्य के अतिरिक्त कि यदि मुसलमानों में अधिक नहीं, तो उतनी ही जातियाँ हैं जितनी हिन्दुओं में हैं। अरब, तुर्क और फ़ारस जैसे विदेशी

आक्रमणकारियों के वंशजों को मुसलमानों के मध्य ''अशरफ़ या अशराफ़''[10] के नाम से जाना जाता है जो कि शरीफ़ का बहुवचन है, जिसका अर्थ है महान अथवा श्रेष्ठ लोग। ब्राह्मण और राजपूत जैसी उच्च हिन्दू जातियों से धर्मांतरित लोगों को ''अफ़ज़ाल या अफ़ज़ल''[11] के रूप में जाना जाता है। निचली हिन्दू जातियों से धर्मांतरित लोगों को ''अज़लफ़ या अज़लाफ़''[12] के नाम से जाना जाता है तथा इनमें निम्नतम को ''अरज़ल या अरज़ाल,''[13] जो रज़ील का बहुवचन है, जिसका अर्थ है निम्न, नीच।

[10] *अनुवादक की टिप्पणी*—अशरफ़ या अशराफ़ मुस्लिम, एक सामाजिक वर्ग है; जिसे पारंपरिक तौर पर प्रभावशाली माना जाता है। अशरफ़ मुस्लिमों का मानना है कि वे विदेशी आतताइयों के वंशज हैं और असली मुस्लिम हैं। अशरफ़ शब्द अरबी के शरीफ़ शब्द का बहुवचन है जिसका अर्थ है 'कुलीन व्यक्ति'। अशरफ़ मुस्लिमों में शेख, सैय्यद, मुग़ल, पठान जैसी जातियाँ सम्मिलित हैं।

[11] *अनुवादक की टिप्पणी*—अफ़जाल या अफ़जल मुस्लिमों में रंगद (मुस्लिम राजपूत) और तागा (त्यागी मुस्लिम) जैसी उच्च जाति के हिन्दू-सम्मिलित हैं।

[12] *अनुवादक की टिप्पणी*—अज़लाफ़ अर्थात् अज़लफ को 'आम लोग' कहा जाता है। अज़लाफ़ मुस्लिम, हिन्दू निम्न जातियों से धर्मांतरित हुए मुसलमान हैं। अज़लाफ़ों में इदरीसी (कपड़े सिलने वाला या दर्जी); क़स्सर, चारहोआ, गज़ार, हवारी (कपड़े धोने वाला या धोबी); मंसूरी या रंगरेज (धुनिया या कपड़े रंगने वाला); गद्दी या घोसी (ग्वाल या पशुपालक); फाकिर जैसे साई, शाह, अल्वी फकीर, शाह अल्वी (पारंपरिक रूप से भीख मांगने वाला या दरगाहों पर काम करने वाला या शिल्प कलाओं में संलग्न कारीगर); हज्जाम या सलमानी (बाल काटने वाला या नाई); जुलाहा या अंसारी (कपड़े बुनने वाला); कसाई या क़ुरैशी (माँस बेचने वाला); कबाड़िया; कुम्हार (मिट्टी के बर्तन बनाने वाला); रहमानी या बंजारा; मिरासी (पारंपरिक गायक और नर्तक पखवाजी या कव्वाल); मनिहार (पारंपरिक रूप से कांच, लाख, या हाथीदांत की चूडियाँ बनाने वाला); तेली या घांची या तेली मलिक (पारंपरिक रूप से तेल निकालने वाला और तेल के व्यापार से सम्बंधित); बाढ़ी, भटियारा, चिक, चूड़ीहार, दाई, धावा, कलाल, कुला, कुंजरा, लहेरी, माहीफरोश, मल्लाह, नालिया, निकारी, अब्दाल, बाको, बेडिया, भाट, चंबा, डफाली, मुचो, नगारची, पनवाड़िया, मदारिया, तुन्तिया आदि जैसे लोग सम्मिलित हैं।

[13] *अनुवादक की टिप्पणी*—अरज़ल या अरज़ाल को नीच अथवा निकृष्ट व्यक्ति माना जाता है। उन्हें कमीना अथवा इतर कमीन या कम ज़ात या रज़ील का भ्रष्ट रूप है ...

मुसलमानों के मध्य जातिवाद की इस आम भाषा से हम सामान्यत: परिचित नहीं हैं। अत: जब वे हिन्दू समाज को जाति-ग्रस्त और अपने समाज को जाति-विहीन बताते हैं, तो मुझे आश्चर्य होता है।

यदि आप एकेश्वरवाद के विषय में इस्लामी तर्क पर चर्चा करेंगे तो आप पाएँगे कि यह एक राक्षसी रक्त-पिपासु विचार है। यह स्पष्ट रूप से आध्यात्मिक विचार नहीं है। यह ईश्वर को उसके ब्रह्मांड एवं सृष्टि से पृथक करता है और उसकी सभी अभिव्यक्तियों को दिव्यता से रहित बना देता है। यह एक ''*थियोलॉजिकल*'' विचार है। यह एक बौद्धिक अवधारणा है। परंतु आज हम भी यह सिद्ध करने में लग गए हैं कि हम भी एकेश्वरवादी हैं। हमें एकेश्वरवाद को समझने और इसे एक ''बौद्धिक कपट'' के रूप में ख़ारिज करने के लिए सनातन धर्म की आध्यात्मिकता और इस्लाम की विचारधारा को भी जानना होगा।

ख़ूनी शारीरिक युद्ध से बचने या उसे टालने के लिए हमें वैचारिक युद्ध में सतत रूप से संलग्न होना पड़ेगा। जो समाज वैचारिक लड़ाई लड़ने में विफल रहते हैं जो वैचारिक आक्रामकता की नीति को अस्वीकार करते हैं, वे शीघ्र ही या कालांतर में शारीरिक आक्रामकता को आमंत्रित करते हैं। यदि नृशंस अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विरोधी की वैचारिक आक्रामकता को शिथिल एवं पंगु नहीं किया गया तो भारतीय समाज दुर्बल हो जाएगा तथा कालांतर में ये नृशंस अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विरोधियों को हिन्दुओं पर शारीरिक आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित करेगा। यह प्रकृति का नियम है। हमने मुस्लिम लीग की वैचारिक आक्रामकता के विरुद्ध लड़ाई नहीं लड़ी, जिसके पश्चात्

...'बेकार' माना जाता है। अरज़ालों में हलालखोर, हवाली, रज़्ज़ात, भंगी, हसनती, लाल बेगी, मेहतर, गधेरी, भानार, हिजड़ा, कसंबी, मोगता आदि जैसे लोग सम्मिलित हैं।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी भी हम पर वैचारिक रूप से आक्रामक हो गई। यह कम्युनिस्ट पार्टी ही थी, जिसने तथ्य और आंकड़े जुटाए और इस्लाम की ओर से वैचारिक आक्रामकता का पक्षसमर्थन तथा पक्षपोषण किया है। मैं इस कुटिल नीति से व्यक्तिगत रूप से परिचित हूँ क्योंकि मैं स्वयं पूर्व में एक धुर कम्युनिस्ट था और हम सभी जानते हैं कि कालांतर में मेरे साथ क्या हुआ और मैं हिन्दू कैसे बना। चूंकि हमनें मुस्लिम लीग तथा उसकी पक्षसमर्थक-पक्षपोषक सहयोगी कम्युनिस्ट पार्टी की वैचारिक आक्रामकता का विधिवत संज्ञान नहीं लिया था, अतः इसके पश्चात् तथा इसके फलस्वरूप उन्होंने हम पर शारीरिक आक्रमण किया। देश का बंटवारा हो गया। लाखों लोग बेघर हो गए, लाखों लोग मारे गए।

अतः यदि हम अपने समाज को शारीरिक आक्रामकता से, शारीरिक ख़ूनी झड़पों से, सड़क पर होने वाले दंगों से, अथवा भीषण रक्तपात से बचाना चाहते हैं; तो हमें त्वरित रूप से इस वैचारिक लड़ाई में संलग्न हो जाना चाहिए। परंतु हमें इस लड़ाई को सुचारु रूप से एवं कुशलता से लड़ने के लिए स्वयं को तैयार करने की भी महती आवश्यकता है। हमें अपने ही हिन्दू समाज, अपनी ही हिन्दू संस्कृति, अपने की हिन्दू इतिहास, अपने ही सनातन धर्म को जानना एवं समझना होगा। हमें अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय इस्लाम, ईसाईयत और साम्यवाद को भी उनके अपने स्रोतों से जानना एवं समझना होगा। हमारे पास इन विदेशी विचारधाराओं का कोई निजी संस्करण नहीं होना चाहिए। हमें उन्हें वैसे ही जानना चाहिए जैसे कि वे वास्तव में हैं, जैसा कि उनके अपने प्रवक्ताओं ने उनके विषय में प्रतिपादित किया है।

हम हिन्दुओं की एक बहुत बुरी आत्मघाती आदत है कि हम अपनी परंपराओं अथवा धर्मग्रंथों में अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय विदेशी

विचारधाराओं के समरूप ढूंढने का प्रयास करते हैं। हम अपने धर्मग्रंथों में ईसाईयत को ढूंढने का प्रयास करते हैं, हम अपने धर्मग्रंथों में इस्लाम को ढूंढने का प्रयास करते हैं, हम अपने धर्मग्रंथों में साम्यवाद को खोजने का प्रयास करते है। यह बहुत बुरी आदत है। हमें शत्रुओं को वैसे ही जानना चाहिए, जैसे कि वे वास्तव में हैं; अन्यथा उनसे वैचारिक लड़ाई लड़ना संभव नहीं है।

आज भारत में ईसाईयत वैचारिक रूप से सुसज्जित है। पिछले कई वर्षों से ईसाई मिशनरियाँ—हिन्दू धर्म, हिन्दू समाज और हिन्दू संस्कृति का अध्ययन कर उनकी धज्जियाँ उड़ा रही हैं। वे जानते हैं कि कब कहाँ और कैसे हमला करना है, कब, कहाँ और कैसे पीछे हटना है। वे सभी रणनीतिक बिंदुओं को जानते हैं। वे सारे हथकंडे जानते हैं। इस्लाम हमारे धर्म या समाज या संस्कृति का अध्ययन नहीं कर रहा है। परंतु वह जानता है कि जब वह यह कहेगा कि वह एकेश्वरवाद पर आधारित है कि वह समानता पर आधारित है कि वह मानव भाईचारे पर आधारित है; तो हिन्दू प्रतिवाद नहीं करेगा। जब भी मुसलमान, हिन्दुओं को साम्प्रदायिक कहते हैं, तो हिन्दू प्रतिवाद नहीं करते हैं। जहाँ तक इस्लाम की अपनी अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय जिहादी विचारधारा का प्रश्न है, इस्लामिक शिक्षा के बहुत सारे केंद्र हैं, जहाँ जिहादी इस्लाम को गहराई और विस्तार से सिखाया जाता है। जिहादी इस्लामिक शिक्षा के इन केन्द्रों के लिए भरपूर वित्त भी उपलब्ध है। नित्य नए इस्लामी विश्वविद्यालय प्रारंभ किए जा रहे हैं। आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि नई दिल्ली में इस्लामिक कल्चरल सेंटर के लिए 15 करोड़ के लागत की योजना बनाई गई है। हिदायतुल्लाह ने इस विषय में बात की है। यह पैसा अरबों द्वारा स्थापित इस्लामिक सहकारी बैंक से आएगा। भारत सरकार भी योगदान देगी।

परंतु भारत में नाममात्र के लायक भी हिन्दू केंद्र नहीं है। हमारे पास बहुत सारे आश्रम और मठ तथा कुछ प्रकाशन गृह हैं। हमारे पास कई मनीषी स्वामी हैं तथा हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति के विषय में बहुत सारे कथन एवं तथ्य हैं। परंतु ऐसा कोई बौद्धिक हिन्दू केंद्र नहीं है, जो हिन्दू विद्वता को प्रकाशित करने में संलग्न हो; जो हिन्दू विरासत की पूरी श्रृंखला का अध्ययन करने में संलग्न हो; जो इस्लाम, ईसाईयत और साम्यवाद को विधिवत जानने और समझाने का प्रयत्न करने में संलग्न हो। ऐसा कोई हिन्दू केंद्र नहीं है, जो तुलनात्मक अध्ययन और दृष्टि की स्पष्टता प्रदान कर सके तथा जो हमें वैचारिक लड़ाई के लिए सक्षम बना सके। जो राष्ट्रीय दृष्टि पुनर्स्थापित हो रही है, उसे न केवल पुन: पुष्ट करना अति आवश्यक है, वरन् उसे वैचारिक रूप से सुसज्जित करना भी अपरिहार्य है।

मैं आज अपना वाणी को विराम देने से पूर्व, एक अन्य पहलू को आपके समक्ष उद्धृत करना चाहता हूँ। हमें इस वैचारिक लड़ाई को नितांत भारत के सीमित सन्दर्भ में होने वाली लड़ाई के रूप में नहीं देखना चाहिए। इससे हमारी राष्ट्रीय दृष्टि संकुचित हो जाएगी। भारत में जो वैचारिक लड़ाई लड़ी जा रही है, वह विश्वव्यापी लड़ाई का एक छोटा-सा अंग है। हम अकेले नहीं हैं। विदेशों में भी हमारे सहयोगी हैं। विदेशी सरकारें और विदेशी वित्तीय संस्थान हमारे सहयोगी नहीं हैं।

हमारे सबसे प्रखर सहयोगी अदम्य और अमरत्व से ओत-प्रोत दिव्यात्माएँ हैं तथा मानव आत्मा की नैसर्गिक संस्कृति है। मानवतावाद, तर्कवाद और सार्वभौमिकता की लहर की बयारें जो पश्चिमी जगत में उफान पर बह रही हैं, वे हमारी सर्वाधिक दृढ़ एवं विश्वसीय सहयोगी हैं। उदाहरण के लिए, ईसाईयत आज पश्चिम में लगभग मृत-सा हो चुका है। वे इस ग़लत धारणा के तहत ईसाई मिशनों को धन देते हैं कि *मिशनरीज़,* भारत

में समाज सेवा का सद्कार्य कर रहे हैं। परंतु यदि हम पश्चिम को तथा वहाँ के दानदाताओं को इस तथ्य से अवगत कराते हैं कि वस्तुत: ईसाई मिशनरी इस धन का दुरुपयोग कर रहे हैं, इसका उपयोग व्यक्तिगत अय्याशी के लिए कर रहे हैं, इसके माध्यम से अमानवीयता के कुकृत्य और आतंकवाद को बढ़ावा दे रहे हैं तथा इस विपुल धन और छल-कपट के माध्यम से सहिष्णु हिन्दू समाज और हिन्दू संस्कृति को नष्ट कर वस्तुत: इस्लाम को सशक्त कर रहे हैं, तो हमें कई सहयोगी मिलेंगे।

इस्लाम को जागृत करना एक दुष्कर कार्य है क्योंकि इस्लाम अभी भी कट्टर अलगाववादी असहिष्णु अमानवीय नृशंस हठधर्मिता की दुनिया में जी रहा है। इस्लामी सोच एवं दारुल-इस्लाम गहरे अंधकार के गर्त में हैं। इन दारुल-इस्लाम भूमियों में भौतिक रूप से प्रवेश करना दु:साध्य है। हम ईसाईयत की मातृभूमि में भौतिक रूप से गमन कर सकते हैं। हम ईसाईयों से असहमति के बिन्दुओं पर वार्ता भी कर सकते हैं, अपील भी कर सकते हैं, वैचारिक चर्चा भी कर सकते हैं। पाश्चात्य ईसाईयों का मन-मस्तिष्क मानवतावाद, तर्कवाद तथा सार्वभौमिकता को दृष्टिगत रखते हुए विवृत है। परंतु इस्लाम का मन-मस्तिष्क संवृत है। इस्लाम में सहिष्णुता अथवा मानवता को जागृत करना सहज-सुगम-सरल नहीं है।

मैंने नृशंस जिहादी इस्लाम की इस समस्या पर श्री रामस्वरूप जी से चर्चा की है। उनका कहना है कि विचार हर दीवार-बाधा को भेद सकते हैं, हर स्थान की यात्रा सरलता एवं सुगमता से कर सकते हैं। हो सकता है कि हम मानवतावाद, तर्कवाद और सार्वभौमिकता के अपने संदेश के साथ भौतिक रूप से इस्लामिक दारुल-इस्लाम की भूमियों में जाने में असमर्थ हों। परंतु हम उनसे उनके संवृत पंथ को क्षणिक रूप से त्यागने तथा स्वतंत्र होकर विचारों का आकलन करने और जीवन का अनुभव करने का

आह्वान तो कर ही सकते हैं। हम उन्हें प्राकृतिक आध्यामिकता, जो कि सनातन धर्म है, में निहित आतंरिक संतुष्टि भाव का अनुभव करने के लिए आमंत्रित तो कर ही सकते हैं। इस्लामिक दारुल-इस्लाम की ज़मीनें गहरे संकटों से जूझ रही हैं। उनके अधिकांश छात्र जो पश्चिमी विश्वविद्यालयों में अध्ययन करने के लिए जाते हैं, जो भारतीय विश्वविद्यालयों में आते हैं, वे अपने इस्लामिक देशों—ईरान और इराक इत्यादि में वापस नहीं लौटना चाहते हैं। उन्हें अपनी मातृभूमि का माहौल घुटन भरा लगता है। वे हमारे प्रच्छन्न अथवा सक्रिय सहयोगी बन सकते हैं।

इसलिए आज भारत में छिड़ी इस वैचारिक लड़ाई को हमें पृथक करके नहीं देखना चाहिए। यह विश्वव्यापी लड़ाई है। असहिष्णु ईसाईयत के विदेशों में भी सहयोगी हैं। असहिष्णु जिहादी इस्लाम के विदेशों में भी सहयोगी हैं। असहिष्णु नृशंस साम्यवाद भी वैसा ही है। परंतु यह भी सत्य है कि विदेशों में भी हमारे सहयोगी हैं।

कदाचित् हमारे सहयोगियों के पास उतना धन न हो जितना उनके सहयोगियों के पास है। हमारे सहयोगियों के पास उतनी भौतिक शक्ति, सैन्य शक्ति नहीं हो सकती है, जितनी उनके सहयोगियों के पास है। परंतु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि हमारे सहयोगी हर स्थान पर एवं हर क्षेत्रों में मानवीय भावना के साथ आचरण कर रहे हैं। हमें इस मानवीय भावना से अनुनय-विनय करना चाहिए, इस मानवीय भावना से सहयोग-सहायता लेनी चाहिए क्योंकि हम एक वैचारिक लड़ाई का सामना कर रहे हैं। हम मानव सभ्यता की विविधता की रक्षा करने के लिए कटिबद्ध हैं अत: हमारा जीतना तय है।

मुझे धैर्यपूर्वक सुनने के लिए तथा इस विषय पर अपना बहुमूल्य समय निकालने के लिए मैं आप सभी का अंत:करण से आभारी हूँ तथा आप सभी को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

About the Translator

सौरभ अग्रवाल, धातुकीय अभियांत्रिकी, आईआईटी-बीएचयू से स्नातक हैं। वह नियमित स्वैच्छिक रक्तदाता, शोधकर्ता, शिक्षाविद्, लेखक-अनुवादक, कवि एवं राष्ट्रवादी सामाजिक कार्यकर्ता हैं। पूर्व में वह इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लिमिटेड के अधिकारी, नारायणा शिक्षण संस्थान, कानपुर के समूह निदेशक (अकादमिक) आदि पदों पर आसीन रहते हुए विभिन्न दायित्वों का निर्वहन कर चुके हैं। इसके पूर्व सौरभ अग्रवाल जी द्वारा अनुवादित तीन पुस्तकें ''**मुस्लिम हमलावरों के विरुद्ध शूर हिन्दू प्रतिरोध (636 ई. से 1206 ई. तक)**'', ''**हिन्दू और हिन्दू धर्मः शब्दों के अर्थ और छल**'' तथा ''**मार्क्सवादी-स्तालिनवादी इतिहासकारों का झूठ का मकड़जाल**'' वॉयस ऑफ इंडिया द्वारा प्रकाशित की जा चुकीं हैं। ''**राष्ट्रीय दृष्टि की पुनर्स्थापना**'' वॉयस ऑफ इंडिया के लिए अनुवादक के रूप में सौरभ अग्रवाल जी की चतुर्थ प्रकाशित पुस्तक है।